जिसने बदली दिशा जगत् की,
धरती और आकाश की ।
जय बोलो ऋषि दयानन्द की,
जय सत्यार्थ प्रकाश की ।।

।। ओ३म् ।।

वर्ष - ६०   अंक - २
मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १००) रु०
आजीवन - १०००) रु०
प्रतिमास ता० १३ को प्रकाशित

आर्य-संसार

माघ-फाल्गुन : सम्वत् २०७४ वि०   फरवरी – २०१८

महर्षि दयानन्द कृत यजुर्वेद-भाष्य के बंगला अनुवाद का विमोचन-
श्री केशरीनाथजी त्रिपाठी, महामहिम राज्यपाल - पं०बगाल करते हुये ।

आर्य समाज कलकता के १३ २ वें वार्षिक उत्सव पर महामहिम राज्यपाल श्री गंगा प्रसाद (मेघालय) के साथ सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेशजी , आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल के प्रधान श्री श्रीराम आर्य , आर्य समाज कलकत्ता के मंत्री श्री दीपक आर्य तथा श्री कृष्ण कुमार जायसवाल , श्री सुरेश अग्रवाल एवं श्री ध्रुव जायसवाल ।

आर्य समाज कलकत्ता के १३ २ वें वार्षिक उत्सव के अवसर पर
आयोजित सामवेद पारायण यज्ञ का दृष्य

ओ३म्

आर्य-संसार

वर्ष ६० अंक — २
माघ-फाल्गुन २०७४ वि०
दयानन्दाब्द १९३
सृष्टि सं० १,९६,०८,५३,११८
फरवरी — २०१८

आद्य सम्पादक
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय
(स्मृति शेष)

•

सम्पादक :
श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
सहयोगी संपादक :
श्रीमती सरोजिनी शुक्ला
श्री सत्यप्रकाश जायसवाल
पं० योगेशराज उपाध्याय

•

शुल्क : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १०० रुपये
आजीवन : १००० रुपये

इस अंक की प्रस्तुति

२. इस अंक की प्रस्तुति		३
३. देवपुरी के निवासी (६०)	वेद-वीथिका से	४
४. स्वामी जी का स्वकथित जीवन-चरित्र	पं॰ लेखराम द्वारा संकलित	८
५. सत्यार्थ प्रकाश काव्य-सुधा (महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थप्रकाश का काव्यानुवाद)	पं॰ देवनारायण तिवारी	१३
६. संसार का पहला शब्दकोश है - वेद	परीक्षित मंडल 'प्रेमी'	१७
७. वैदिक धर्म के प्राण	पं० उम्मेद सिंह विशारद	२०
९. हे प्रभो ! हमें अभय दीजिए	अभिमन्यु कुमार खुल्लर	२३

आर्य समाज कलकत्ता

१९, विधान सरणी, कोलकाता-७०० ००६

दूरभाष : २२४१-३४३९ **email : aryasamajkolkata@gmail.com**

'आर्य संसार' में प्रकाशित लेखों का उत्तरदायित्व सम्बन्धित लेखकों पर है ।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र कोलकाता ही होगा ।

६०

देवपुरी के निवासी

अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या ।
तस्यां हिरण्यमयः कोशःस्वर्गो ज्योतिषावृतः ।।

अथर्व १०-२-३१

शब्दार्थ :-

अष्टाचक्रा	=	आठ चक्रवाली
नवद्वारा	=	नव द्वारों वाली
देवानाम्	=	देवों की
पूः	=	पुरी
अयोध्या	=	अजेय
तस्याम्	=	उसमें
हिरण्यमयः	=	चमकीला, सुनहला
कोशः	=	आवरण, म्यान
स्वर्गः	=	सुखद
ज्योतिषा	=	ज्योति से
आवृत	=	आच्छादित

भावार्थ :- आठ चक्रों और नव द्वारों वाली यह देवपुरी अजेय हैं । उसमें स्वर्णिम ज्योति से आच्छादित कोष में जीव सुखद निवासी हैं ।

विचार विन्दु :

१. **देवपुरी क्या है ? क्यों इसे देवपुरी कहते हैं ?**

२. **यह अयोध्या क्यों है ?**

३. **आठ चक्र नव द्वार क्या कौन हैं ?**

४. **स्वर्णिम ज्योति का कोष का भाव ।**

५. **स्वर्ग कैसे हैं ?**

व्याख्या

इस मंत्र में हमारे शरीर को देवताओं की नगरी कहा गया हैं। इसमें आठ चक्र और नौ द्वार हैं। उपनिषद् में एक कथा आती है । भगवान् ने जब हाथ, पैर आदि कर्मेन्द्रियों को और आंख, कान, नाक आदि ज्ञानेन्द्रियों को बनाया तो इन्द्रियों ने भगवान् से प्रार्थना की कि आपने हमें बना तो दिया किन्तु

हमें रहने की जगह भी दीजिए, हम कहां जायें ? परमेश्वर ने गाय का शरीर बनाया और इन्द्रियों के सामने लाकर प्रस्तुत किया और भगवान् ने कहा कि तुम लोग इस शरीर में अपने-अपने स्थान पर चले जाओ । इन्द्रिय रूपी देवताओं ने भगवान् से निवेदन किया कि यह हमारे लिए पर्याप्त नहीं है । तब भगवान् ने घोड़े का शरीर बना दिया । इन्द्रियों ने उसे भी अपर्याप्त बताया । फिर भगवान् ने मनुष्य का शरीर बनाया और इन्द्रिय रूपी देवताओं ने कहा कि--हां यह हमारे लिए यथेष्ट है, पर्याप्त है, हम इसमें रहेंगे । यह शरीर देवपुरी बन गया । हमारी इन्द्रियां देवता हैं । वे जो कुछ भी ग्रहण करती हैं, सारे शरीर को बांट देती हैं । जिह्वा रस लेती है, भोजन करती है और सारे शरीर को बांट देती है, आंख रूप देखती है और सारे शरीर को बांट देती हैं । यही स्थिति सभी इन्द्रियों की है । 'देवो दानात्'—दान देना देवगुण है, अतः इन्द्रियां देव हैं और शरीर देवपुरी है ।

इन्द्रियां देवता हैं । उन्हें बुरी वस्तुएं पसन्द नहीं, उन्हें बुराई से घृणा है । जीभ में यदि कोई सड़ी-गली, कुस्वादु,अखाद्य वस्तु पहुंच जाये तो वह उसे बाहर फेंक देती है, मनुष्य को वमन, कै हो जाती है । न आंखों को कुरूप पसन्द है, न कानों को कुशब्द। यह सब देवताओं के लक्षण हैं । 'मलिनता न दधाति गुणे पदम्' ।

हमारे शरीर को अयोध्या कहा गया हैं । यह सरयू के तट पर बसाई गई रघुवंशियों की पुरी अयोध्या-नगरी नहीं है । अयोध्या का अर्थ होता है - 'न योद्धुं शक्या' जिस पर शत्रुओं को लड़ने की निर्बल जगह नहीं मिलती है । भगवान् ने हमारे शरीर को ऐसा बनाया है कि इसमें काम, क्रोध, लोभ आदि शत्रु प्रवेश ही नहीं कर सकते । काम, क्रोध, लोभ आदि हमारे जीवन के शत्रु हैं । जब उन्हें किसी इन्द्रिय में कोई निर्बलता दिखती है तो वे उसी छिद्र में घुसकर हम पर आक्रमण कर देते हैं । जिसकी इन्द्रियां स्वस्थ है, मन बलवान है वह काम, क्रोध आदि शत्रुओं को घुसने नहीं देता । हमारे शरीर को इस मंत्र में अष्टाचक्रा, आठ चक्रों वाली नगरी कहा गया हैं । योगी लोग बताते हैं कि हमारे शरीर में आठ चक्र हैं और वे हमारे मेरुदण्ड से संबंधित हैं । किन्तु अधिक विस्तार में बिना गये हम चक्रों को इस रूप में देख सकते हैं । (१) मूलधार (२) स्वाधिष्ठान (३) मणिपूरक (४) अनाहत (५) सूर्य (६) विशुद्ध (७) आज्ञा और (८) सहस्रार । ये आठों चक्र लम्बवत् हैं । वेद की भाषा में इन्हें भूभर्व स्वः आदि लोकों का नाम दिया जाता हैं । प्राणों की गति इन्हीं चक्रों में होकर मस्तिष्क के शीर्ष सहस्रार तक होती है । हमारे मेरुदण्ड का लम्बवत् होना मानव जीवन की बड़ी भारी विशेषता है । इसी से प्राणों का उत्थान होता है, इसी से चेतना का ऊर्ध्वारोहण होता है, इसी से आज्ञा-चक्र की ग्रंथियां सक्रिय होकर हमारी ज्ञान-साधना को बल देती हैं । रीढ़ का लम्बवत् होना किसी भी पशु-पक्षी के भाग्य में नहीं है। जो लोग यह साधना करते है उनका जीवन सफल हो जाता हैं, नहीं तो जीवन में नाश ही नाश है —

अष्ट चक्र और नवद्वार पर विचार -

मनुष्य के शरीर की अद्वितीय विशेषता यह है कि मनुष्य का मेरुदण्ड (रीढ़) लम्बवत् है । यह हड्डी होती तो चौपायों में भी है । किन्तु पशुओं में मेरुदण्ड भूमि के समानान्तर पड़ा हुआ है, लम्बवत् खड़ा हुआ नहीं है । प्राण-वाहिनी नाड़ियां-इडा, पिंगला, सुषुम्णा मेरुदण्ड में होकर ही चलती हैं और प्राण

नीचे से ऊपर की ओर गति करते हैं। चेतना जीवात्मा का गुण है और चेतना का वाहन (Vehicle) ये नाड़ियां नीचे से ऊपर चेतना के ऊर्ध्वारोहण का मार्ग हैं। चेतना का यह ऊर्ध्वारोहण प्राण-प्राणायाम के सहारे होता है।

हमारे शरीर में आठ चक्र हैं और शरीर को तीन लोकों में विभाजित माना गया है। नाभि से नीचे पृथ्वी लोक, नाभि से कण्ठ तक अन्तरिक्ष लोक, कण्ठ से मूर्धा-कपाल तक द्यौ-लोक कहा जाता है। नाभि तक तीन चक्र हैं - मूलाधार, स्वाधिष्ठान और मणिपूरक। ये तीनों चक्र शरीर के पृथ्वी लोक में हैं। अनाहत और विशुद्ध - ये दो चक्र अन्तरिक्ष में हैं। अनाहत दोनों छातियों के बीच में हृदय में है और विशुद्ध कण्ठ में है। आज्ञा चक्र दोनों भौंहों के मध्य है। यहीं मसूर की दाल की तरह दो प्रज्ञा-ग्रंथियां हैं। और आठवाँ कोई सूर्य चक्र को मानते हैं जो दोनों पसलियों के जोड़ पर धड़कन की जगह पर है। कोई - कोई जिह्वा मूल में ललना चक्र को आठवां चक्र मानते हैं।

मूलाधार चक्र मल-मूत्र मार्गों के मध्य में है और शरीर की ऊर्जा के उत्पादन का केन्द्र है। यह तो है हो मूलाधार जो मेरुदण्ड की निचली छोर के पास है। और यहां से प्राणों की ऊर्ध्वगामी यात्रा प्रारम्भ होती है। यह भी जीवन का अधिष्ठान है। मणिपूरक नाभि प्रदेश के पीछे है और यह सारी सृजन-प्रज्ञा का केन्द्र है। इसका प्रजनन से सीधा संबंध है। सूर्य चक्र दोनों पसलियों के बीच में है। यह जीवन का मर्मस्थान है। यहीं धड़कन पैदा होती है। यहां ध्यान करने से, कुछ साधकों के मन में, शरीर के सूर्य-आलोक का दर्शन होता है। पांचवा चक्र अनाहत दोनों छातियों के बीच में है और परमेश्वर के ध्यान का बड़ा उत्तम स्थान है। कण्ठ में विशुद्ध चक्र है और जिह्वा मूल में ललना चक्र है जहां एक विशेष मुद्रा में अमृत बिन्दु का क्षरण बताया जाता है। भ्रू-मध्य में आज्ञा-चक्र है जहां ध्यान करने से प्रज्ञा का विकास होता है। यहीं जुगनू, तारा, शशि, सूर्यलोक का दर्शन होता है। शरीर में सबसे ऊपर सहस्रार है जो ब्रह्मरंध्र है। ये सब योग के बड़े गंभीर विषय हैं। हमारे शरीर में नौ द्वार हैं। दो कान, दो आंख, दो नाक, एक मुख और मल-मूत्र द्वार - ये नौ द्वार कहे जाते हैं। प्रसिद्ध पद है -

'नौ द्वारे का देहरा तामें पंछी पौन।
रहबे की अचरज अहै, जाय तो अचरज कौन।'

ये नौ दरवाजे ग्रहण और विसर्जन, दोनों के मार्ग हैं।

हिरण्यमय कोश - यह आनन्दमय कोष है। हमारे पांच कोष हैं। इन्हें म्यान जिसे हम परतली या आवरण कह सकते हैं। हमारा स्थूल शरीर अन्नमय कोष है। उससे सूक्ष्म हमारा प्राणमय कोष है और फिर मनोमय कोष है। चौथा विज्ञानमय कोष है और पांचवा आनन्दमय कोष है। इसी आनन्दमय कोष को हिरण्यमय कोष कहा गया है। जो लोग यह साधना करते हैं उनका जीवन सफल हो जाता हैं, नहीं तो जीवन में नाश ही नाश है —

'बरबाद यों ही हो गये बर्के किताबे जिन्दगी ।

कुछ हमीं ने फाड़ डाले, कुछ हवा में उड़ गये ।।'

जिनका जीवन साधनामय होता है जिनके प्राण इन आठों चक्रों में होकर ऊर्ध्वगमन करते हैं, जिनकी चेतना जिनका ज्ञान ऊर्ध्वारोहण करता है, वे अपने हिरण्यमय-कोष को प्राप्त कर लेते हैं, हिरण्य का सीधा अर्थ होता हैं--स्वर्ण । किन्तु हिरण्य को परिभाषित करते हैं । (१) यशोवै हिरण्यं (२) तजोवै हिरण्यं (३) हितरमणीयं भवति ।

मंत्र में कहा हैं कि हमारे शरीर में ज्योति से प्रकाशित एक हिरण्यमय-कोष है । वहीं सुख का धाम स्वर्ग है । जो मनुष्य अपने जीवन को प्रभु के गुण-गान से भर लेता है उसके जीवन में यह स्वर्ग का सुख उसी हिरण्यमय-कोष में, म्यान में मिल जाता है । कहा है - भगवान् का नाम ही तो अमर-सुख है --

'अखिलाधार ! अमर-सुख धाम ।

एक सहारा तरा नाम ।।'

●

आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ

३१ वाँ नि:शुल्क नेत्र शल्य चिकित्सा शिविर

प्रत्येक वर्ष की भांति इस वर्ष भी आर्य समाज कलकत्ता की युवा-शाखा ने नि:शुल्क नेत्र शल्य चिकित्सा शिविर का आयोजन १४ जनवरी २०१८ को आई पेवेलियन, 4B लिटिल रसल स्ट्रीट में किया गया था, जहाँ ४१ निर्धन, असहाय रोगियाँ के आँखा के मोतियाबिन्द का सफल आपरेशन नगर के नामी नेत्र सर्जन डा० रजनी सराफ के द्वारा हुआ । कार्यक्रम को सफल बनाने में युवा शाखा के सभी सदस्यो का विशेष योगदान रहा । इस वर्ष कार्यक्रम के शिविर सचिव विवेक जायसवाल एवं शिविर इनचार्ज कृष्ण कुमार जायसवाल थे । सभी रोगियाँ को आपरेशन के पूर्व एवं पश्चात् नि:शुल्क दवा एवं चश्मा संस्था के द्वारा प्रदान किया जाता है ।

प्रभाकर सेठ

अध्यक्ष

(युवा-शाखा)

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का जीवन वृत्त

अध्याय-१

पुष्कर के मेले का वृत्तान्त

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म फाल्गुन कृष्ण पक्ष दशमी को गुजरात में सम्वत् १८८१ में हुआ था । पूरे भारतवर्ष में स्वामी जी का जन्म दिवस मनाया जाता है । इसी अवसर पर आर्य समाज कलकत्ता ने निर्णय किया कि पं० लेखराम द्वारा संकलित एवं आर्य महामहोपदेशक कविराज श्री रघुनन्दन सिंह निर्मल द्वारा अनूदित महर्षि स्वामी दयानन्द का जीवन चरित्र धारावाहिक प्रकाशित किया जाय, इसी शृंखला में प्रस्तुत है यह धारावाहिक जीवन-चरित्र — सम्पादक

(गतांक से आगे)

अध्याय २

गंगा नदी के तट पर सात वर्ष का जीवन

(फाल्गुन शुदी १, सं० १९२३ से स० १९३० तदनुसार १२ मार्च, १८६७ से सन् १८७३ ई० तक)

हरिद्वार से रामनगर तक

मूर्तिपूजा, तीर्थों व अवतारों आदि का खण्डन- स्वामी देवेन्द्र सरस्वती, जो स्वामी शंकरानन्द के शिष्य हैं, वे भी उपस्थित थे । उनका कथन है कि स्वामी जी मूर्तिपूजा, भागवत तथा नवीन सम्प्रदायों का वहाँ बड़ी प्रबलता से खंडन करते रहे । वेदान्त को कदाचित् मानते थे परन्तु तीर्थों, अवतारों, मूर्तियों और व्रतों का प्रबल युक्तियों से खंडन करते थे ।

पंडित बस्तीराम प्रसिद्ध विद्वान् कनखल पाठशाला, ने कहा कि मैं स्वामी जी से संवत् १९२४ में मिला था । 'व्याकरण' पर बातचीत होती रही । वह पूर्ण विद्वान् थे और वेद तथा शास्त्र का उनको अच्छा ज्ञान था । मूर्तिपूजा के खंडनादि तथा कुछ और बातोंमें मेरी उनसे सहमति नहीं ।

आर्यजाति के गुरुओं संन्यासी आदि की दुर्दशा देखकर द्रवित हो उठे । दिव्य दृष्टि से देखा— प्रतिमापूजन को ही सारी दुर्गति का आधार पाया— स्वामी रत्नगिरि जी, ने स्थान अजमेर में कहा था कि जब स्वामी जी के दर्शन चौबीस के कुम्भ में हरिद्वार पर हुए तो उनके साथ एक अच्छा डेरा था जो अकस्मात् वन में आग लग जाने से जल

गया था । उस समय साधु उमीदगिरि जी की मंडली का डेरा भी जल गया था । स्वामी जी का डेरा सप्तस्त्रोत पर था जो हरिद्वार से तीन कोस पर ऋषिकेश के मार्ग में है । जो लोग हरिद्वार से ऋषिकेश को जाते थे—गृहस्थी, संन्यासी, निर्मले, वैरागी आदि सब, उनके दर्शन को आया करते थे । विशेष-विशेष गद्दीधारी यद्यपि स्वयं नहीं गये परन्तु अपने विद्वान् शिष्यों को भेजकर शंका समाधान करते रहे । पंडित श्यामसिंह ठाकुरों के डेरे वाले और आत्मस्वरूप अमृतसर वाले और समस्त प्रसिद्ध पंडित चर्चा और वार्तालाप के लिए जाया करते थे ।

साधारणतया मेले में साधुओं की अत्यन्त बुरी अवस्था थी । संन्यासी जिनका काम जगत् का सुधार करना था वह गिरि, पुरी, भारती, आरण्य, पर्वत, आश्रम, सरस्वती, सागर, तीर्थ, गुसाईं — इन दस भागों में विभक्त होकर परस्पर गृहयुद्ध में फँसे हुए थे । गुसाई विवाह करके भगवे बाने को लाज लगा रहे थे क्योंकि कलियुगी लोकोक्ति के अनुसार भोग और योग को मिला रहे थे । वे नाम के त्यागी थे परन्तु वास्तव में गृहस्थियों के बाबा बन रहे थे । मद्यपान, माँसभक्षण, व्यभिचार जो वाममार्ग, चोली-मार्ग और बीजमार्ग के साधन हैं, उन्हें वे **'अहं ब्रह्मास्मि'** की तरंग में माता का दुग्ध समझ रहे थे । सत्य का मार्ग भुलाकर स्वयं ब्रह्म बने हुए थे । निर्मले नाम ही के निर्मले थे अन्यथा सत्यधर्म की निर्मलता और उज्ज्वलता से कोसों दूर थे और दूर क्यों न होते, क्या कहीं स्वार्थ में भी पवित्रता हो सकती है ? उदासी- उदास तो नहीं प्रत्युत साक्षात् आशा की मूर्ति थे । हाथी, घोड़े, रुपहली और स्वर्णमयी झूलें, मखमली तकिये और जरबफ्त (एक प्रकार का बहुमूल्य कपड़ा) के गदेले, सोने के कंगन और चांदी के उगालदान- सारांश यह कि सब कुछ पास था । उन्हें देख कर कौन है जो उन्हें उदासी कहे और अपनी मूढ़ता को स्वीकार न करे ।

वैरागी- यूँ मुहँ से कहने को सब वैराग्य विद्यमान, त्याग विद्यमान, लोगों का धन फूंकने को आग की अंगीठी भी पास में, परन्तु काला अक्षर भैंस बराबर । खाने और पड़े रहने या वैरागिनों में जीवन व्यतीत करने के अतिरिक्त सार्थक वैराग्य का वहां पता नहीं था । गीता का (मूल) पाठमात्र भी हजारों में से एक को ही याद होगा और अर्थ करोड़ों में से दस बारह जानते होंगे और इस पर भी यह दशा कि ऐसा व्यक्ति ढूँढे से भी अप्राप्य जो तम्बाकू, चरस, भंग अथवा गांजे का सेवन न करता हो । योगी गोरखनाथ के नाम को दूषित करने वाले, कानों में सुनहरे कुंडल डाले कोई किसी गद्दी का महन्त और कोई किसी का । धर्म-कर्म से अपरिचित, योग के पूरे शत्रु, मद्यमाँस के सेवन में चतुर, लोगों के सरलप्रकृति बच्चों के कान फाड़ने में सजग । राजा महाराजा आँख के अन्धे, गाँठ के पूरे,

इसी प्रकार के संड-मुसंडों के चेले और अनुयायी, तन, मन, धन, गुसाईं और गुरु जी के अर्पण करने वाले, चाटुकार और भीरु दरबारियों के संसर्ग में दिनरात रहकर धर्म और संसार से वेसुध, अफीम के गोले चढ़ाने में निपुण साधुओं का अविद्यान्धकार में फंसना और गृहस्थियों का विनाश, राजाओं की मूर्खो से संगति और विद्वानों के प्रति उपेक्षा; विद्वानों का मौनधारण और सत्य का प्रकाश न करना और इस पर एक सत्यप्रिय तथा सत्यवादी की निन्दा, यह सब देखकर स्वामी जी का चित्त अत्यन्त उत्तेजित हुआ, हृदय भर आया। समस्त भारत निवासियों के प्रतिनिधियों के रूप में जो प्रत्येक प्रकार के मनुष्य वहां उपस्थित थे उनको और समस्त मेले को उनके मर्मज्ञ स्वभाव और मनुष्य को पहचानने वाली आँखों ने दिव्य और सूक्ष्म दृष्टि से देखा और प्रत्येक को मूर्तिपूजा तथा सृष्टिपूजा से डूबा हुआ देखकर अत्यन्त दुःखित हुए। ऋषि-मुनियों की संतान और व्यास और कपिल के वंशजों को प्रतिमापूजन करते देखकर उनके मन में तीव्र वैराग्य उत्पन्न हुआ।

परोपकार के लिए पूर्णाहुति

देश का सुधार ही एकमात्र लक्ष्य - पंडितों का वैदिकधर्म की ओर से प्रमाद और उपेक्षा और ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्यों को ईसाई और मुसलमान होते देखकर और सुनकर उनका दयालु हृदय स्थिर न रह सका और उन्होंने यह न चाहा कि मैं भी इन सब के साथ मिलकर इन्हीं का अनुकरण करता चला जाऊँ। बार-बार देखा और कई बार देखा, विचार किया और सोचा, एक दिन नहीं, प्रत्युत कई दिन। पर्व के दस बारह दिन पश्चात् तक सोचते रहे। अन्त को उनके सत्यप्रिय स्वभाव ने अत्यन्त दुःखभरे शब्दों में यह सम्मति दी कि तू औरों की भाँति प्रमाद मत कर। रोग को जानकर उसकी चिकित्सा में प्रमाद करना भयानक पाप है। तुझे परमेश्वर ने आंखें दी हैं, तू सत्यधर्म के महत्व को जान चुका है, उठ ! खड़ा हो और सोते हुओं को जगा, साहस से काम ले क्योंकि जो औरों की सहायता करता है ईश्वर उसके सहायक होते हैं। **'परोपकाराय सतां विभूतयः।'** यह विचार दृढ़ होते ही व्याख्यान देते-देते एका-एक दिल भर आया। व्याख्यान की समाप्ति पर **'सर्वं वै पूर्णं स्वाहा'** कहके अपना सब कुछ त्याग दिया। पुस्तक, बर्तन, पीताम्बरी धोतियाँ, रेशमी वस्त्र, दुशाले और ऊनी कपड़े, रुपया पैसा आदि जो कुछ था— वह सब जो जिसके योग्य देखा उसे बाँट दिया।

उस समय स्वामी कैलाशपर्वत ने उनसे कहा कि तुम ऐसा क्यों करते हो ? उत्तर दिया कि हम स्पष्ट कहना चाहते हैं और निर्भय हुए बिना स्पष्ट कहना सम्भव नहीं है। जब तक हम अपनी आवश्यकताओं को कम न करेंगे अपनी अभिलाषा को पूरा नहीं कर सकेंगे।

पण्डित दयाराम ने कहा कि जब मेला हो गया तो मेले के दस-ग्यारह दिन पश्चात् सब प्रकार के सांसारिक झंझटों को त्याग कर, पूर्ण वैराग्यवान् हो, नग्न, एक लंगोट रखकर, एक पुस्तक महाभाष्य और ३५ रुपये रोकड़ा और एक थान मलमल, हमको देकर कहा कि स्वामी विरजानन्द जी के पास मथुरा में पहुँचा दो और स्वयं यह प्रण करके कि जब तक हमारी अभिलाषा पूर्ण न हो संस्कृतभाषण करते रहेंगे और गंगातट पर विचरेंगे—शेष सब कुछ बाँटकर गंगातट पर चल पड़े । हमने ये वस्तुएँ मथुरा में दंडी जी महाराज को पहुँचा दीं और हरिद्वार का सारा वृत्तांत उनको सुनाया । वह सुनकर मौन हो गये ।

जोशी रूपराम कहते है कि स्वामी जी ने हरिद्वार पहुँच कर एक चिट्ठी ठाकुर रणजीतसिंह, रईस अचरौल के नाम भेजी; जिस पर सरदार ने मुझे आज्ञा दी कि तुम वहाँ जाओ और दो अशर्फी भेंट के लिए दीं । परंतु जब मैं पहुँचा तो उससे पहले ही स्वामी जी सब बस्तुएं लोगों को बांट चुके थे । केवल एक माला और एक दुर्गा की पुस्तक शेष थी । मुझे दस रुपये देने लगे, मैंने रुपये तो नहीं लिए परन्तु माला और पुस्तक ले ली ।

स्वामी रत्नगिरि कहते है कि जब स्वामी जी सब कुछ त्याग कर गंगा के तट पर विचरने का प्रण किया तो उस समय सब महात्मा साधु लोग यही कहते थे कि जो बात दयानन्द कहते हैं अर्थात् मूर्ति- पूजा और पुराणों का झूठा होना और सम्प्रदायों का मिथ्यापन - यह है तो सत्य परन्तु खुल खेलना अर्थात् संसार की रीति के विरुद्ध चलना अच्छा नहीं ।

ऋषिकेश से गढ़मुक्तेश्वर तक - प्रथम ऋषिकेश की ओर गये और पांच-छ: दिन में लौटकर दक्षिण की ओर चल पड़े । **हरिद्वार** से चल कर **कनखल** होते हुए गंगातीर पर स्थित **'लंढौरा'** पहुँचे । तीन दिन से कुछ न खाया था, अब जब बहुत भूख लगी तो एक खेतवाले से कहा उसने तीन बैंगन दिये -वही खाकर मन को तृप्त किया ।

वहाँ से **'शुक्रताल'** गये जहाँ लोग कहते हैं कि शुकदेव ने कथा सुनाई थी । फिर परीक्षितगढ और फिर गढ़मुक्तेश्वर आये । वहाँ पन्द्रह दिन रहे, बालू में दिनरात पड़े रहते थे । वहाँ के पंडितों से शास्त्रार्थ हुआ । रुड़की से बीस कोस इधर मीराँपुर में भी किसी से दो दिन शास्त्रार्थ हुआ था ।

कर्णवास में आगमन : सभाजयी की धूम मच गई

फिर सीधे गंगा के किनारे चलते-चलते वैशाख शुक्ला, संवत् १९२४ तदनुसार मई मास, सन् १८६७ में कर्णवास पहुँचे । **ठाकुर शेरसिंह जी कर्णवास** निवासी लिखते

हैं कि इस बार केवल एक दिन ठहर कर चले गये और उसी संवत् के अषाढ़ शुदि ५ (६ जौलाई) को **पंडित टीकाराम शास्त्री** ने रामघाट में दर्शन किया और वार्तालाप हुआ। उन्होंने वहाँ से आकर ठाकुर गोपालसिंह जी से कहा कि एक दिगंबर संन्यासी गंगा किनारे बनखंडी पर मिले और हरिद्वार के कुम्भ में सभा जीत कर आये हैं, संस्कृत वाणी बोलते और बड़े विद्वान् हैं । मूर्तिपूजा, अवतार, कंठी, माला, तिलक, भागवत, सम्प्रदाय आदि को मिथ्या और पाखण्ड बतलाते हैं । ब्राह्मण, क्षत्रयि तथा वैश्य की एक ही गायत्री कहते हैं —हम उनको यहां बुला आये हैं । यह सुनकर ठाकुर धर्मसिंह (जो पंडित टीकाराम जी से व्याकरण पढ़े थे और अच्छे व्याकरणी थे) और ठाकुर गोपालसिंह की परस्पर सम्मति से पंडित टीकाराम जी को बुलाने भेजा गया परन्तु श्री स्वामी जी महाराज उसी दिन कर्णवास पक्के घाट पर गंगा किनारे आ गये और पंडित भगवान दास, भागवती-पण्डित ने भोजनादि से सेवा सत्कार किया । हम लोगों को पंडित टीकाराम जी ने दूसरे दिन रामघाट से लौट कर स्वामी जी के यहाँ पधारने की सूचना दी । हम लोग पक्के घाट पर स्वामी जी के पास पहुँचे —देखा कि नागा बाबा की मढ़ी, जो खाली पड़ी थी, उसके आगे बसेन्दू वृक्ष की छाया में गंगा-रज लगाये अकेले लंगोटी बांधे महाराज विराजमान हैं । पंडित टीकाराम जी को हमारे साथ देख कर स्वामी जी प्रसन्न हुए और व्याकरण के जानने वाले ठाकुर धर्मसिंह ने संस्कृत में स्वामी जी महराज को अपना नाम और जाति कहकर अभिवादन किया । स्वामी जी ने प्रत्युतर दिया और अति प्रसन्न होकर हम लोगों से प्रेमपूर्वक वार्तालाप किया । उस दिन दर्शन करके कुछ समय पीछे हम लोग चले आये। अब गांव में चर्चा फैली कि बड़े भारी महात्मा और संस्कृत के पंडित आये हैं । पहले कभी न देखे गये न सुने गये । इसी आन्दोलन में स्वामी जी महाराज को श्रावणमास बीतकर आधा भादों आ गया और पंडित टीकाराम जी स्वामी जी से मनुस्मृति और उपनिषदादि पढ़ते और विचारते रहे । इसी अन्तर में पंडित भगवानदास भागवती से एक दिन स्वामी जी महाराज ने कंठी-तिलक धारण करने का साधारण प्रकार से निषेध किया । वह सुनकर चुपके ही चले आये और ग्राम में आकर स्वामी जी के विरुद्ध उद्योग करना चाहा । आश्विन के महीने में बाहर के आये हुए पंडितों से भगवानदास ने स्वामी जी के निषेध का सम्पुर्ण वृतान्त विरोधी बनकर कह सुनाया । तब तो ग्राम-ग्राम और नगर-नगर में स्वामी जी की बड़े आश्चर्य के साथ चर्चा फैली और दानपुर के पंडित निद्धालाल जी तथा अहमदगढ़ के पंडित कमलनयन जी शरत् पूणिमा को स्नान करने आये स्वामी जी के दर्शन किये और कुछ शास्त्रविचार भी हुआ ।

क्रमशः ....

सत्यार्थ प्रकाश काव्य सुधा

महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश का काव्यानुवाद

– पं० देवनारायण तिवारी 'निर्भीक'

मो0 : 9830420496

(८)

श्री पं० देवनारायण तिवारी – आर्य समाज के उपदेशक और विद्वान् कवि हैं, इनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं जिसमें ४ महाकाव्य हैं । पं० जी ने सत्यार्थ प्रकाश का छन्दबद्ध भावानुवाद किया है । आर्य समाज कलकत्ता ने इसे आर्य संसार मासिक पत्र में धारावाहिक रूप से प्रकाशित करने का निश्चय किया है ।

यह नवम् कड़ी आपके समक्ष है । – सम्पादक

प्रथम समुल्लास (गत जनवरी अङ्क से आगे)

वह ब्रह्म परम अजेय है उस पर न कोई शक्ति है ।
पाता विजय सब काल वह जो व्यक्ति करता भक्ति है ॥
''यो विजिगीषते स देव : ''
जो न्याय अरु अन्याय का है रूप विधिवत् जानता ।
व्यवहार सारे विश्व का भी जानता पहचानता ॥ ८२ ॥

उपदेश देता है सभी को सत्य के व्यवहार का
शिक्षा हृदय - में जीव को देता सदा आचार का ॥
वह देव स्तुति योग्य है, है निन्दनीय कभी नहीं ।
आनन्द-मोद प्रदान करता, शोक-दुख हरता वही ॥
जो प्रलय में अव्यक्त जीवों को सुलाता नींद में ।
अरु रात्रि रचता स्वप्न जिसमें देखते सब नींद में ॥ ८३ ॥

सब कार्य जिसके सत्य ही होते जिसे बुध चाहते ।
जो व्याप्त सबमें एक-सा, जिसको न ज्ञानी त्यागते ॥
इस हेतु उसको **''देव''** कहते, सर्व कुछ देता सदा ॥
अनभल न करता है किसी का ईश है मङ्गल मुदा ॥ ८४ ॥

(कुबि आच्छादने) इस धातु से कुबेर शब्द सिद्व होता है ।
यः सव कुम्बति स्व व्यात्याच्छादयति स कुबेरो जगदीश्वरः।।
छन्द- जो व्याप्त होकर विश्व में सब पर रखे छाया घनी ।
उसकी कृपा की दृष्टि सब पर सब समय रहती बनी ।।
परमाणु से आकाश तक द्यौ लोक के उस पार भी ।
निज शक्ति से सबको ढंके रहता, करे उद्धार भी ।।८५ ।।

उसकी क्रिया में रञ्च भर भी हो न कोई देर है ।
इस हेतु प्यारे ब्रह्म का प्रिय नाम एक कुबेर है ।।८६ ।।

(प्रथ विस्तारे) इस धातु से पृथिवी शब्द सिद्व होता है ।
पर्थ सर्व जगत् विस्तृणाति तस्मात् स पृथिवी ।।

छन्द - जो सर्व विस्तृत जगत का विस्तार करता है महा ।
परमाणु से द्यौ लोक तक संसार रचता है महा ।।
इक विन्दु को जो सिन्धु करता, सूक्ष्म से साकार कर
ब्रह्माण्ड रचता है महा जोड़े बिना आकार कर ।। ८७ ।।

लघुबीज से करता वृहत् सा वृक्ष महिमा वान है ।
सबमें समाहित गुप्त रहता ईश एक समान है ।।
दृढ़ता बड़ी जिसमें भरी रहती सदैव अपार है ।
इस हेतु '' **पृथिवी** '' नाम उसका, शक्ति का भण्डार है ।। ८८ ।।

(जल घातने) इस धातु से ''जल शब्द सिद्ध होता है।
जलति धातयति दुष्टान् संघातयति-अव्यक्त परमाणवादीन तद् ब्रह्म ''जलम्'' ।।

छन्द - जो दुष्टजन को दण्ड देकर निबल करता गात को ।
देकर विरुज तन-रुग्णता हरता वृहद् उत्पात को ।।
तत्क्षण जलाकर गात-बल, दुर्बल करे बलवान को ।
कोई दबा पाता नहीं उस ब्रह्म महिमावान को ।। ८९ ।।

परमाणुओं को संगठित कर जगत् रचता है महा ॥
इस हेतु ''जल'' इक नाम उस परमात्मा का है कहा ॥

(काश दीप्तौ) इस धातु से ''आकाश'' शब्द सिद्ध होता है ।
यः सर्वतः सर्वं जगत् प्रकाशयति स आकाशः ॥

छन्द - जो सब दिशाओं से जगत् को है प्रकाशित कर रहा
बस इसलिए ''आकाश'' उस परमात्मा को है कहा ॥९०॥
अर्थात् वह अपनी विभा से सृष्टि को दिखला रहा ।
रवि, चन्द्र, पावक और विद्युत शक्ति वह दर्शा रहा ।
जिनकी प्रभा से विश्व सारा पूर्ण ज्योतिष्मान है।
इनका रचयिता ब्रह्म ही है, जो कि महिमावान् है ॥ ९१ ॥

(अद् भक्षणे) इस धातु से ''अन्न'' शब्द सिद्ध होता है ॥
अद्यतेऽति च भूतानि तस्मादन्नं तदुच्यते । अहमन्नमहमन्न महमन्नम् ॥
अहमन्नादो अहमन्नादोऽहमन्नादः॥ तैतिरीयोपनिषद अनुवाक २/१०
अत्र चराऽचर ग्रहणात् ॥ वेदान्त दर्शन अ०१पा०२०। सू०
छन्द- प्रतिक्षण सभी को जो कि अन्तर में बसाने योग्य है ।
जो ग्रहण करने और सबके ध्यान लाने योग्य है
इस हेतु ईश्वर **''अन्न''** है, अन्नाद है इस सृष्टि में ।
रचता, पचाता भी सभी को व्याप्त सकल समष्टि में ॥ ९२ ॥

जैसे उदुम्बर के फलों में बहुत भुनगे जन्मते ।
बसते उसी में और मरते, औ उसी में विकसते ॥
त्यों ब्रह्म के ही उदर में ब्रह्माण्ड सकल समा रहा ।
उत्पन्न होता, विकसता, अरु मरण भी है पा रहा ॥ ९३ ॥

उस ब्रह्म से बाहर न कोई सृष्टि- सत्ता है कहीं ।
उसके बिना सरके न कुछ, परमाणु गति करते नहीं ॥
अतएव ईश्वर अन्न है **''अन्नाद''** है, अत्ता वही ॥
वह बीज है, और वृक्ष भी, फल-फूल भी, पत्ता वही ॥ ९४ ॥

(वस निवासे) इस धातु से ''वसु'' शब्द सिद्ध होता है ।
''वसन्ति भूतानि यस्मिन्नथवा यः सर्वेषु वसति स वसुरीश्वरः ॥

छन्द - जिस ब्रह्म में नभ आदि सारे भूतगण का वास है ।
वह भी सकल जग में रमा हरता सभी का त्रास है ॥
''वसु'' इसलिए परमात्मा का एक सुन्दर नाम है ।
उससे अपर दूजा न कोई दे सके विश्राम है ॥९५॥

(रुदिर अश्रु विमोचने) इस धातु से णिच् प्रत्यय होने से रुद्र शब्द सिद्व होता है ।

॥ यो रोदयत्यन्याय कारिणो जनान् स रुद्र :॥

छन्द - अन्यायकारी खल जनों को वह रुलाता खूब है ।
वह अति प्रबलतम दण्डधर है, शक्ति उसकी खूब है ॥
इस हेतु उस परमात्मा को **''रुद्र''** कहते शास्त्र हैं ।
उस सम न कोई और है वह स्वयं ही शस्त्रास्त्र हैं ॥९६॥

यन्मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति, तद्वाचा वदति तत् कर्मणा करोति, यत् कर्मणा करोति तदमि सम्पद्यते ॥

छन्द - मन में करे नर ध्यान जो बाणी वही है बोलती ॥
फिर कर्म भी वैसा करे, जिस भांति रसना डोलती ॥
फिर तदनुसार मिलें सकल फल और उनको भोगता
जब दुष्ट कर्मो को करे तब ब्रह्म उसको रौंदता ॥९७॥

दुख रूप फल के प्राप्त से रोता विलखता चीखता ।
इस भांति ईश्वर है रुलाता तब भले कुछ सीखता ॥
इस हेतु भी परमात्मा का नाम भीषण **''रुद्र''** है ।
वह दण्ड भी देता बहुत है, यदपि शील समुद्र है ॥९८॥

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नर सूनवः।
ता यदस्यायनं पूर्व, तेन नारायण : स्मृतः॥ मनुस्मृति अध्याय - १/१०

छन्द- जल और जीवों का विबुध नारा कहें इक नाम हैं ।
नारा बिना होते न नर, औ वारि नारा धाम है ॥
बसते चराचर ब्रह्म में; सबका निवास स्थान है ।
वह भी सभी में वास करता, ईश ही सुखधाम है ॥९९॥

क्रमशः ....

संसार का पहला शब्दकोश है - वेद

- परीक्षित मंडल 'प्रेमी'

ऐतिहासिक सर्वेक्षणों, पुरातात्त्विक प्रमाणों तथा भाषाशास्त्रीय विवेचनों से यह प्रमाणित हो चुका है कि अपौरुषेय वेद भाषाबद्ध वाङ्मय में संसार का प्राचीनतम सार्वभौम ग्रंथ है । इसकी उम्र को आँकने के लिए कतिपय पौर्विक-पाश्चात्य मनीषी सैकड़ों वर्षों से सतत प्रयत्न करते आ रहे हैं । परन्तु कोई भी मनीषी विचारक इस कालजयी वेद के रचना-काल को इदमित्थं निश्चित नहीं कर सका । यह पूर्ववत् अज्ञात एवं रहस्य बना हुआ है । वेदज्ञ मि० मौरिस फिलिप ने अपनी पुस्तक **'टीचिंग आफ दि वेदाज़'** में स्पष्ट लिखा है कि ''वेद भारत की ही नहीं अपितु समस्त संसार की सबसे प्राचीन सनातन धर्म पुस्तक है । संसार की सभ्यता का आदिम—स्रोत वेद है क्योंकि वेद ईश्वरीय और अपौरूषेय है ।'' ''पुन: जर्मनी के मान्यवर प्रो० मैक्समूलर ने अपनी पुस्तक India What can it Teach us, Page - 118 में लिखा है कि ''वेदों को हम इसलिए आदिसृष्टि से कह सकते हैं कि उनसे पूर्व का कोई अन्य लिखित चिन्ह नहीं मिलता । परंतु वेद के भीतर जो भाषा, देवमाला, धर्म और अध्यात्मविद्या का ज्ञान हमें मिलता है वह हमारे सामने इतनी प्राचीनता का दृश्य दिखलाता है कि कोई भी मनुष्य इस प्राचीनता को वर्षों की संख्या में नहीं ला सकता । कतिपय चित्रलेख, गुहालेख, ताम्रपत्र आदि भी वेद से अर्वाचीन ही है । उन्हें वेद से प्राचीनतम मानने की प्रवृत्ति अनेकश: दिखाई पड़ती है । परंतु वह भाषा वैज्ञानिक, पुरातात्विक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से मान्य नहीं है ।'' स्वामी विवेकानंद ने उद्घोषित किया है कि ''वेद स्वत: प्रमाण है, क्योंकि वेद अनादि, अनंत है, वेद ईश्वरीय ज्ञानराशि है। वेद कभी नहीं लिखे गए, न कभी सृष्ट हुए, वे अनादिकाल से वर्तमान है । जैसे सृष्टि अनादि और अनंत है वैसे ही ईश्वर का ज्ञान भी ,यह ईश्वरीय ज्ञान ही वेद है।'' पुनश्च वेदों की गरिमा स्वीकारते हुए अमेरिका के उच्चतम न्यायालय ने यह उद्‌गार प्रकट किया है कि ''वेद स्वत: प्रमाण है । सभ्यता की बुनियाद में भारत ने जो शिला रखी वह वेद ही है जिनमें दिव्यज्योति से युक्त परिलक्षित सृष्टि के नियम और उसकी व्यवस्था का प्रकार समन्वित है जिनकी युग-युगांतर पर्यंत लोगों के लाभार्थ एक विशेष भाषा में अभिव्यक्ति की गई है। यह ज्ञान हमें मौखिक परंपरा द्वारा प्राप्त हुआ है और इसकी व्यवस्था इतनी बारीकी और सुंदरता से की गई है कि उसमें काट-छांट वा प्रक्षेप की गुंजाइश ही नही है। प्रारंभिक धर्म का यह सर्वोत्कृष्ट कीर्तिस्तंभ ऋग्वेद है जिसमें पुरातत्व के कोई चिह्न नही है। जिसका न कोई मठ है और न मंदिर है, न कोई सम्प्रदाय या पंथ है, न कोई संस्थापक और न वस्तुत: जिसका कोई इतिहास है । जो हिंदू धर्मशास्त्र के सिद्धांतों एवं आदर्शों का निरूपण करता है और जिसमें हजारों मंत्र है ।''

वस्तुत: वेद विश्व साहित्य में प्राचीनतम नैसर्गिक अमर काव्य है। यह हमारे लिए अतुलित ज्ञान - सम्पति का दिव्य आगार है । इसकी दिव्य ऋचाएँ अर्थगांभीर्य से परिपूर्ण है । तभी तो वेदज्ञ प्रो० मैक्समूलर महोदय वेदों की महिमा के गीत गाते हुए मुक्तकंठ से कहते हैं- ''किसी भी भाषा के ग्रंथ ने जो काम नहीं किया वह वेदों ने संसार के इतिहास में किया है । जिन्हें अपने और अपने पूर्वजों का अभिमान है, जिन्हें बौद्धिक विकास की इच्छा है, उन सबको वेदों का अभ्यास करना नितांत आवश्यक है ।'' इस दृष्टि से वेदों का महत्व सर्वोपरि है ।

ऋग्वेदादि संहिताओं की विशद विशेषताओं का उल्लेख करना यहाँ अभीष्ट नही है , किंतु यह बात उल्लेखनीय है कि इन संहिताओं के अनेक स्थल शब्दकोश की दृष्टि से महार्घ महत्व के हैं। यजुर्वेद और अथर्ववेद के सूक्त ऐसे प्रतीत होते हैं मानो कि इनमे शब्द-भण्डार ही सजा सजाया प्रस्तुत कर दिया गया है। इस विशेषता के आधार पर यह कहा जा सकता है कि शब्दकोश का प्राचीनतम रूप हमें ऋग्वेदादि संहिताओं में प्राप्त होता है । विश्व का आदिग्रंथ ऋग्वेद में भी इस शब्द-भण्डार की कुछ झांकी कतिपय सूक्तों में हमें प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए ऋग्वेद के दशम मंडल का यक्ष्मा-सूक्त (१० । १६३) द्रष्टव्य है। इसमें मानव शरीर-रचना से जुड़े अनेक शब्दों का प्रयोग किया गया है, जो वेद-ऋषियों के शरीर विज्ञान संबंधी ज्ञान को प्रकट करता है। इसमें मानव शरीर के निम्नलिखित अंगों का वर्णन है:-
अक्षि, नासिका, कर्ण, छुबुक (चिबुक-ठोढ़ी), शीर्ष्ण, मस्तिष्क, जिह्वा ,ग्रीवा, उष्णिह, कीकस, अनूक्य, अंस, बाहु, आंत्र, गुदा, उरस्, हृदय, मतस्ना, यक्त (यकृत), प्लाशि, ऊरू, अष्टीवद्, पार्ष्णि, प्रपदा, श्रोणि, भासद, भंसस्, मेहन, वनंकरण, लोम, नख, पर्व ।'' इसका व्यवहार हमारे वेदकाल के ऋषि-मुनियों, मनीषियों और कवियों द्वारा किया जाता था। ऋग्वेद के इस सूक्त के ६ मंत्रों में मानव-शरीर के इतने अंगों का वर्णन मानों कोशकार की पद्धति पर दिए गए शब्दों का ही दूसरा ढंग है। इसी पद्धति पर यजुर्वेद के पच्चीसवें अध्याय के प्रथम नौ मंत्रों की एक विस्तृत सूची दी गई है जो इस प्रकार है:-

रद् (दाँत), दंतमूल, बर्स्व, पक्ष्म, दंष्ट्र, अग्रजिह्वा, तालु, हनु, आस्य, अण्ड, श्मश्रु, भ्रू, वर्त, वर्त्म, पक्ष्म, कनीनका, नासिका, प्राण, अपान, अधर, ओष्ठ, सदुतर, प्रकाश, अनूकाश, मस्तिष्क, कर्ण, श्रोत, अधरकंठ, वेदनी, शुष्क, कंठ, मन्या, शीर्ष्ण, स्तुप, केश, स्वपस्-वह,शकुनिसाद, शफ, स्यूर, जँघा,जाम्बील, अतिरुच, दोस्, असं, पक्ष, निपक्ष, दक्षिण-पार्श्व, उत्तर-पार्श्व, स्कन्ध, प्रथम कीकसा, पुच्छ, भासद, श्रोणी, ऊरू, अल्गा, स्थूरा, कुष्ठा, वनिष्ठु, स्थूलगुद, वृषण, शेष, रेतस्, पित्त, प्रदर, पायु, शर्कपिंड, क्रोड, पाजस्य, जत्रु, भसत्, पुरीतत्, उदर्य, मतस्ना, वृक्क, प्लाशि, प्लीहन, क्लोम, ग्लौ, हिरा, कुक्षि, उदर, भस्मन्, नाभि, रस,

यूषण, विप्रुड, उष्मण, वसा, अश्रु, दूषिका,असन्(असृक्), अंग,रुपत्वक्। इसी प्रकार की एक लंबी सूची अथर्वेद, २०/९६/१७-२३- में भी है । पुन: यजुर्वेद संहिता २७/४५ में अनेक प्रकार के वर्ष की सूची दी गई है, जो इस प्रकार है :- संवत्सर, इडावत्सर, इद्वत्सर और वत्सर। यजुर्वेद २७/४५ में वर्ष के प्रमुख भाग को - उषस, अंहोरात्र, अर्धमास, मास और ऋतु कहा गया है । पुन: यजुर्वेद २२/३१ में बारह मासों के नाम इस प्रकार पठनीय है :- मधु, माधव, शुक्र, शूचि, नमस्, नमस्य, इष, ऊर्ज, सहस्, सहस्य, तपस्, तपस्य ।'' इस प्रकार ऋग्वेदादि संहिताओं के अध्ययन-अनुशीलन करने से ज्ञात होता है कि सर्वज्ञानयम वेद संसार का आदि शब्दकोश है और यह वैदिक संस्कृत भाषा की सबसे प्राचीनतम अमरकृति है . यह वैदिक संस्कृत भाषा, अनुमान है, लगभग १९६२९४१११६ वर्ष पुरानी है । यह योगात्मक और संगीतात्मक भाषा है। यह व्यापक और विस्तृत क्षेत्र में विचार-विनियम की भाषा थी, साहित्यिक थी, ऋषि-मुनियों की भाषा थी । यह भाषा सभी सीमाओं को लांघकर विश्व फलक पर विचार-विनियम का साधन बनकर निखिल विश्व की भावात्मक एकता, समता और मानवीय मूल्यों को स्थापित कर रही थी । वेद विज्ञानाचार्य डॉ० सत्यप्रकाशानंद सरस्वती ने लिखा है कि ''य़ह बात निर्विवाद है कि प्राचीन मानवीय भाषा का जो स्वरूप वैदिक वाड्.मय के रूप में इतने विस्तार से अब भी सुरक्षित है, उतना अन्य किसी उस भाषा का नहीं, जो अपने को उतना ही प्राचीन घोषित करने का अधिकार रखती है । वैदिक भाषा का शब्द-भण्डार भारत में ही नहीं, भारत से चलकर समस्त यूरोपीय देशों में पश्चिम की ओर पहुँचा और एशिया के अनेक खंडों में भी । '' इससे यह स्पष्ट है कि संसार की २७९६ भाषाओं में वैदिक संस्कृत भाषा प्राचीनतम और ध्वनिवैज्ञानिक भाषा है । यह एक निर्विकल्प भाषा है । इसीलिए इसे मर्यादित तथा नियम-बद्व भाषा कहते हैं । भाषा के इस मर्यादा संस्कार, शब्दानुशासन और नियमित नियमचर्या का प्रभाव जीवन पर भी पड़ता है । उच्चारण से आचरण तक को वैदिक संस्कृत के भाषा-संस्कार ने प्रेरित-प्रभावित किया है । इसलिए यह कहा जा सकता है कि आज की आचरण-उच्छृंखलता के युग में संस्कृत का 'अथ शब्दानुशासनम् सूत्र वस्तुत: अनुशासित करने वाला सूत्र है ।

संपर्क - वेद सदन अमरपुर
पो०-पथरा
जिला-गोड्डा ८१४१३३
झारखंड
फो०-9162208005

वैदिक धर्म के प्राण

-पं० उम्मेद सिंह विशारद

सत्य + न्याय + दया + अहिंसा + ईश्वरभक्ति

(अन्य मतों से तुलनात्मक सत्य)

धर्मो का आदि स्रोत वेद है, वेदों की शिक्षा मानव मात्र के लिए ईश्वर द्वारा प्रदत्त हैं । ईश्वर ने सृष्टि का निर्माण किया और उसके उपभोग के लिए वेदों का संविधान भी दिया है जो प्राणिमात्र के कल्याण के लिए हैं । और प्राणियों के कल्याण के लिए भिन्न-भिन्न पदार्थ को बनाया है, और उन पदार्थे के गुण, कर्म, स्वभाव आदि में अनन्त काल तक अर्थात सर्वकाल में एक समान रहते हैं । उन पदार्थो को हम सृष्टि कर्म विज्ञान कहते है । जैसे सूर्य, चन्द्र, वायु, अग्नि, जल, वनस्पति, भूगोल, आदि तथा प्राणियों में भिन्न-भिन्न शरीर और उनकी इन्द्रियां जो जन्म जन्मान्तरों तक एक समान रहती हैं। इस नित्य कर्म विज्ञान को हम सृष्टि क्रम, धर्म कहते हैं, और वहीं वास्तविक धर्म है । इसीलिए मनुष्य मात्र का वैदिक धर्म है।

धर्मो एवों हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः

अथार्त-जो मनुष्य ईश्वरीय धर्म की उपेक्षा करता है, धर्म उसका ही नाश कर देता है, जो ईश्वरीय धर्म का पालन करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है । मानवीय जगत में प्रत्येक पदार्थे को उसके गुण क्रमनानुसार मानना, और सम्पूर्ण प्राणियों के साथ उसी के अनुकूल व्यवहार करना, अपने जीवन में, सत्य व्यवहार, और सृष्टि क्रमनानुसार प्रत्येक कृत्य मानना व करना, तथा जैसे ईश्वर प्राणी मात्र के लिये उपकार करता है वैसे ही अपने आप भी करना, वास्तविक धर्म कहाता है ।

मानव समाज ने अपने स्वार्थ के लिये सम्प्रदायों मतों का निर्माण करके उस मत को धर्म का नाम देकर मनुष्य मात्र को स्वार्थी व सृष्टि क्रम विरुद्ध धर्मो में उल्झा दिया है । आज मानव जगत विज्ञान में सर्वाधिक उन्नति कर रहा है । किन्तु मानवीय धार्मिक व्यवहारों के पालन में दिनों-दिन पतन होता जा रहा है । बिना ईश्वरीय धर्म के केवल विज्ञान की उन्नति विनाश का कारण बनता है ।

यदि संसार के सारे मत मतान्तर ईश्वरीय धर्म सृष्टि क्रम धर्म को मुक्त कंठ से स्वीकार कर लेंवे तो सम्पूर्ण विश्व में शान्ति स्थापित हो सकती है । उपयुक्त धर्म प्राण जो व्यक्त किये हैं, यदि उसमें एक सिद्धान्त भी निकाल दिया जाए तो वह धर्म नहीं रहता है । उक्त सिद्धान्त ही धर्म का वास्तविक स्वरूप है । आइए इन सिद्धान्तों गुणों पर विचार करते है ।

धर्म का प्रथम सिद्धान्त-सत्य

सत्य के अनेक भेद हैं । परन्तु जो पदार्थ जैसा दिखता है उसको वैसा ही मानना, जानना, कहना,

सत्य की सामान्य परिभाषा है। क्योंकि भाव का कभी अभाव और अभाव का कभी भाव होता ही नहीं है । त्रिकालातीत को सत्य कहते हैं अर्थात् जो त्रिकाल की चपेट में न आये उसे सत्य कहते है । असत्य से सत्य और सत्य से ऋत सत्य महान है, जिसके बल पर सब कुछ टिका है । ऋत सत्य को समझना अनिर्वाय है । क्योंकि असत्य कल्पित, सत्य संकलपित और ऋत सत्य स्वाभाविक है । असत्य के असुर, सत्य के आश्रित मनुष्य और ऋत सत्य के आश्रित देवता रहते हैं । स्वाभाविक सत्य सदैव सत्य ही रहता है । सत्य को कभी दबाया नही जा सकता है सत्य से सुगम कोई मार्ग नही है। वह वेद का उपदेश है ।

इसलिए वैदिक धर्म ईश्वर को निराकार मानता है, मूर्ति पूजा का निषेध व काल्पनिक देवी देवताओं की पूजा, भूतप्रेत, जादू टोना, फलित ज्योतिष, पशुबलि, मृतक का श्राद्ध, जाति पाति, छुआ-छूत को नही मानता इनका वेदों में और ईश्वरीय सृष्टिक्रम में कोई संकेत नहीं है ।

मत मतान्तर- अवतारवाद, मूर्तिपूजा, देवी दवताओं की पूजा, फलित ज्योतिष, जाति पांति, ग्रहों का लगना, अनेक काल्पिनिक मान्यताओं को मानते हैं इसलिए यह सभी सत्य से बहुत दूर है।

धर्म का दूसरा सिद्धान्त न्याय

महर्षि दयानन्द जी न्याय की परिभाषा करते हुए कहते हैं कि जो सदाविचार कर असत्य को छोड़ सत्य का ग्रहण करें, अन्यायकारियों को हटावें, और न्यायकारिको को बढ़ावे, अपने आत्मा के समान सब का सुख चाहे उसे न्यायकारी मानता हूँ ।

वैदिक धर्म को छोड़कर अन्य मतावलम्बी निर्पक्ष न्याय, अथार्त जैसा का जैसा कहने में हिचकते हैं, इसलिए वह भी धर्म का अधूरापन कहा जायेगा । जबकि कानून सत्य न्याय की दुहाई देता है ।

धर्म का तीसरा सिद्धान्त दया

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं कि दया और न्याय का नाम मात्र ही भेद है । क्योंकि जो न्याय से प्रयोजन सिद्ध होता है वही दया से । दण्ड देने का प्रयोजन है कि मनुष्य अपराध करना बन्द कर दु:खो को प्राप्त न हो वही दया कहाती है। यह दण्ड और न्याय व्यवस्था में लागू होता है किन्तु मानवीय सामाजिक, धार्मिक व्यवहारिक जगत में मनुष्य अपने सुकर्म व दुष्कर्म से ही दया का विश्लेषण करता है । प्राणी मात्र पर दया करना, निरीह जीव-जन्तु की हत्या न करना, असहाय की सहायता करना, रोगी की सेवा करना, घृणा न करना, आपस में स्नेह से बर्तना ,और जैसा मैं अपने लिए चाहता हूँ वैसा ही दूसरो से व्यवहार करना सदैव सात्विक वृति का पालन करना, दया का लक्षण हो सकता है । सत्य धर्म वही है जहां प्राणी मात्र पर दया की जाती हो।

धर्म का चतुर्थ सिद्धान्त अहिंसा

मन वचन कर्म द्वारा किसी को हानि न पहुँचाना,और किसी के प्रति द्रोह का भाव न रखना, ही अहिंसा

है। सत्य, चोरी न करना, ब्रह्मचर्य और अद्रोह अहिंसा के सहायक है । अहिंसा साधना करने में स्वार्थ त्याग की आवश्यकता है जिस मत सम्प्रदाय में हिंसा होती है, वह धर्म का मत नही कहा जा सकता है ।

धर्म का पंचम सिद्धान्त सत्य ईश्वर भक्ति है ।

महर्षि दयानन्द जी आर्य समाज के दूसरे नियम में सत्य ईश्वर की व्याख्या की है ।

ईश्वर सच्चिादानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर-अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टि कर्ता है । उसी की उपासना करनी योग्य है ।

मानव जगत में सम्पूर्ण विवाद, द्वेष, पाप, उग्रवाद, अलगाव, अज्ञानता, शोषणवृत्ति, हत्याएं, लूट-पाट, अन्धविश्वास आदि ईश्वर के स्वरूप को न जानने व न मानने के कारण हो रही है। अपने अपने मतानुसार अपनी मान्यता को ही सत्य मानना तथा ईश्वरीय व्यवस्था, सृष्टिक्रम विज्ञान की उपेक्षा से ही आज सत्य धर्म का पतन हो रहा है ।

स्पष्ट है वैदिक धर्म के अतिरिक्त प्रत्येक मतों में उक्त किसी न किसी सिद्धांत की कमी है। विचार कीजिये ।

धर्म निरपेक्ष कानून या विचार, क्या मानव को शान्ति दे रहे है ।

समानो मन्त्र: समिति: समानी समानं मन: सह चित्तमेषाम
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये व: समानेन वो हविषा जुहोमि''
अर्थात हो विचार समान सबके चित्त मन सब एक हो ।
ज्ञान देता हूं, बराबर भोग्य पा सब नेक हों ।।

महाभारत काल के बाद वैदिक संस्कृति व संस्कारों का युग समाप्त हो गया था और अवसरवादी वेद विहीन चतुर लोगों ने अपने मतों की दुकाने खड़ी कर दी और विवेकहीन व अदूरदर्शी राजनेताओं ने इन मतों को वोट बैंक के लिए हवा देकर धर्म निरपेक्ष कानून बना दिया जिसका परिणाम वर्तमान में दिख रहा है फलस्वरूप भारत का बड़े से बड़ा नागरिक भी जड़ चेतन भेद का न समझ कर जड़ को शीश झुकाता है । अन्यो की तो बात है क्या है ?

मुझे लगता है कि जड़ पूजा धर्म निरपेक्ष नारा व सामजिक कुरीतियाँ इस सृष्टि को समाप्त होने प्रलय तक समाप्त नहीं होने वाले है ।

वैदिक धर्म का आवाज नक्कार खाने मे तूती की आवाज हो रही है। फिर भी हमें आस नहीं छोड़नी चाहिए ।

और प्रत्येक चिन्तनशील मनीषी को ईश्वर वाणी वैदिक धर्म को सापेक्ष-सार्वभौम-सर्व जानना व मनवाना है, सत्य धर्म है ।

हे प्रभो ! हमें अभय दीजिए

लेखक - अभिमन्यु कुमार खुल्लर
सेवानिवृत वरिष्ठ लेखाधिकारी (केन्द्र)
स्थायी पता - २२ नगर निगम क्वार्टर्स, जीवाजीगंज, लश्कर
ग्वालियर - ४७४००१ म०प्र०
e-mail- *khullar2010@gmail.com*

अथर्व वेद का मंत्र है :-

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ।। अथर्व १९/५/ १६

अथर्व वेद के इस मन्त्र ने, चित्त में गहरी छाप छोड़ी थी गहराई में जा कर, सोचने-विचारने का विचार सुष्त/कारण अवस्था में, चित्त (हाई डिस्क) में पड़ा रहा । अभी तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु लेख को सजाने-संवारने का काम चल ही रहा था । विचार बन रहा था कि इसके बाद क्या लिखना होगा ?

प्रभु ! ने रात तीन बजे उठा दिया । शांति प्रकरणम् के उपरोक्त, मंत्र पर विचार कर ।

कालातीत प्रश्न है इसीलिये तो वेद में है, अंतिम सत्य और अंतिम प्रमाण के रूप में । सतही रूप में निष्कर्ष निकालना भी कठिन नहीं है पर बात गहरी है ।

पूर्ण भय मुक्त अवस्था में ही, मानव-मस्तिष्क पूर्ण एकाग्रता से, अनन्त आकाश की ऊंचाइयों तक पहुंचता है । ब्रह्मांड में विचरण करता हुआ मन, प्रभु की निकटता का अनुभव कर, अनमोल उपलब्धियां प्राप्त करता है । जन कल्याण के लिये, ऐसा महामानव, उन्हें वाणी में, शब्दों मे ढाल कर सम्पूर्ण विश्व को सुलभ कराता है ।

यज्ञों को विध्वंस करने वाले मानुषों को , राक्षसी संज्ञा देकर उनके समूल नाश के निमित्त, महर्षि विश्वामित्र, महाराज दशरथ के दोनो पुत्रों - राम और लक्ष्मण को, राजपाठ के सुखा से हटा कर, दूर घने जंगलों में ले गए । राजा एवं राजमहीषिणियां एक शब्द तक नहीं बोल पाईं । यह थी आर्य संस्कृति । राम और लक्ष्मण की प्रैक्टिकल ट्रेनिंग भी हो जावेगी ।

आचार्य सत्यानन्द नैष्ठिक एम० ए ० (वेद-संस्कृत) की अत्यन्त दुर्लभ कृति वैदिक नित्य कर्म एवं पञ्चमहायज्ञ विधि में दिया अर्थ, यथावत प्रस्तुत है-
हे प्रभो ! आपकी कृपा से मित्र से अभय हो, शत्रु से भी भय न रहे । प्रत्यक्ष में अभय हो, परोक्ष में अभय हो, रात्रिकाल में अभय प्राप्त हो , दिवस काल में अभय प्राप्त हो, सब दिशाएं मेरी मित्र-स्नेह

युक्त और हानि रहित हो जावें, आपकी कृपा से हमें, सब ओर से, सब समय में, अभय प्राप्त हो और हम निर्भय बनें ।

सुभाषित का पूर्वार्द्ध है -

आहार, निद्रा भय मैथुनं च

सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्

अर्थ सरल है, स्पष्ट है । पशुओं और मानवों में आहार, निद्रा, भय और मैथुन एक समान विद्यमान होते हैं पशु से तात्पर्य समस्त प्राणिजगत से है ।

पशुओं की बात निकली तो स्मरण आ रहा है कि किशोर आयु में वनराज शेर को भयभीत अवस्था में देखा था और वह भी वन के रास्ते में दे्वखो, ग्वालियर शिवरात्रि पर्व के लिये जा रहे थे । सुरम्य पहाड़ियों के बोच, जलप्रवाह हो रहा था । ऊपर पहाड़ पर शिव मन्दिर है । बाऊजी, टेम्पल इन्सपैक्टर पद पर आसीन थे । सिंधिया वंश के गगांजली फन्ड से पोषित यह शिवमन्दिर विशेष स्थान रखता था । शिन्दे शासक शिकार के लिये यहां आते थे उनके विश्राम के लिये रेल का डिब्बा रखा हुआ है । व्यवस्था के लिये बाऊजी जाते थे और हम लोगों की शानदार पिकनिक होती । शाम का समय था । सूयास्त हो ही रहा था । मंदिर से ४-५ किलोमीटर पहिले, सड़क के मोड़ पर, नीम के पड़ के नीचे, जंगल का राजा शेर, दो गायों को घेर कर खड़ा था । आक्रमण की हिम्मत नहीं कर पा रहा था । दोनो गाएं कांपती हुई, बार-बार सू.सू कर रही थी । गाएं शेर से डर रही था । दो थीं इसलिए शेर उनके सीगा के प्रहार से भयभीत था । पक्का शिकारी था । सूयास्त की प्रतीक्षा कर रहा था । अंधकार बढ़ने लगा था । शेर की आखं प्रदीप्त हो उठीं । गाएं की आंखों में उतनी रोशनी कहां ? अंधेरा थोड़ा और गहराया । झपट्टा मारा और एक गाय को घसीट कर जंगल के अन्दर ले गया । कहानी का अंतिम अंश ग्रामीणों से सुबह पता चला । जंगल का राजा भैसों का शिकार भी आसानी स नहा कर पाता क्योकि भैसों का झुण्ड, गोल घेरा बनाकर, आक्रामक मुद्रा में आ जाता हैं । जंगल का राजा, भय के कारण, भाग खड़ा होता है ।

सम्पूर्ण विश्व के सामाजिक परिवेश में भय का आकलन भी भयावह । विज्ञान की व्यापक उन्नति से अणुबम पर एकाधिकार अब केवल महाशक्तियों तक सीमित नहीं रह गया है । अन्य राष्ट्र भी परमाणु बम की शक्ति, से सम्पन्न हो गए हैं ।

विश्व १९१४-१८, व १९३९-४५ दो महायुद्ध देख चुका है । दोनों युद्ध ५-५वर्ष की अवधि तक चले । दोनो युद्धों में केवल मृत सैनिको की संख्या (नब्बे लाख + २३० करोड़) + ३.३० करोड़ है । घायल युद्धजन्य ,बीमारियो से मृतको की संख्या बहुत अधिक है । दूसरे महायुद्ध में परमाणु बम का प्रयोग हुआ था । विश्व शांति की स्थापना में १९२० में लीग ऑफ नेशन्स की स्थापना हुई और

१९४५ में UNO संयुत्त, राष्ट्र संघ की स्थापना हुई । १९४५ के बाद अभी तक तो विश्व युद्ध की नौबत नहीं आई है पर भय बना हुआ है परमाणु हथियार में मारकशक्ति का अत्याधिक विस्तार हो चुका है । अब अनेक राष्ट्रों के पास आणविक अस्त्र-शस्त्र हैं ।

इस्लामिक शक्तियां कुरान आधारित इस्लाम के विस्तार के लिये अत्याधिक व्याकुल हैं । सम्पूर्ण विश्व में मुस्लिम आतंकवाद का नाच हो रहा है इस्लामिक राष्ट्र स्वयं ही आपस में जमकर वर्षों से रक्तपात कर रहे हैं । और उधर उत्तर कोरिया का तानाशाह विश्वशांति के लियें भयंकर खतरा बन चुका है । वैश्विक शांति की स्थिरता के लिये विकासशील देशों में अग्रगण्य भारत की भूमिका है । विश्व की गणमान्य शक्तियों में उसका स्थान बन जाना सुनिश्चित हो गया है । केवल चीन की वीटो शाक्ति भारत का सुरक्षा परिषद में प्रवेश का मार्ग अवरुद्ध किए हुए है ।

७० साल आजादी प्राप्त होते हुए व्यतीत हो चुके हैं । काफी आर्थिक सुधार हुआ है । सुधारों की सुद्धढ़ नीव पड़ी है । लेकिन सामाजिक समस्याओं में वृद्धि हुई है । जातिगत - आरक्षण केवल १० वर्ष के लिये था जो अब तक स्थिर आकार ले चुका है । सामाजिक असंतोष बहुत अधिक बढ़ गया है । मुस्लिम तुष्टीकरण के संस्थापक बैरिस्टर मोहनदास करमचन्द गांधी ने तुर्की के खिलाफ आन्दोलन का समर्थन करके डाली थी । आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि पाकिस्तान के संस्थापक मोहम्मद अली जिन्ना ने गांधी जी के इस समर्थन का विरोध किया था । इसी नीति के कारण भारत का विभाजन हुआ । भयंकर रक्तपात मे २० लाख से अधिक जानें गई ।

काश्मीर की समस्या खड़ी कर दी । कबाइलियों की आड़ में पाकिस्तानी सेना काश्मीर के भूभाग पर कब्जा जमा चुकी थी । काश्मीर का अंसतोष मुस्लिम और शेष भारतीय जन में अंशाति का, भय का वातावरण बना चुका है । २ करोड़ से अधिक प्रकरण अदालतों में निराकरण के लिये लम्बित पड़े है । कितने अपराधी जेलों में बन्द है । अपराध का कलंक लेकर निकलने पर पुन: अपराध की दुनिया में खोजने को विवश । २-४ वर्ष की अबाध बच्चियां बलात्कार, हत्या का शिकार हो रही हैं । शिक्षा प्राप्त करने के लिये विद्यालयों से आना-जाना भयंकर संकट बन गया है । मार्ग में सुरक्षा नहीं है । चाकू-छुरे बाजी, गोलीबारी की घटनाएं भय के वातावरण को और घना कर रही हैं ।

कांग्रेस के ही स्वर्गीय प्रधानमंत्री - मूत्रज्ञान विशेषज्ञ मोरारजी देसाई से भय मुक्त भारत का नारा सुना था एक ओर भयमुक्त भारत निर्माण का आह्वान दूसरी ओर महिलाओं के लिये सन्देश कि रात आठ बजे के बाद घर से बाहर निकलना ही नहीं चाहिए ।

मोदीजी से, पहिले से ही गुजरात सम्पूर्ण भारत में महिलाओं के लिये सबसे अधिक निरापद स्थान था, है भी । रात १२ बजे के बाद भी युवतियां घर पहुंच जाती है । बड़ौदा और अहमदाबाद के दीर्घकालीन प्रवास में हम स्वयं देख चुके हैं । भय मुक्त वातावरण मोदीजी अच्छी तरह जानते हैं,

पहचानते है । सफाई अभियान भयमुक्त भारत निर्माण का प्रारम्भ था ।

भय को भय से ही मुक्त किया जा सकता है । इस कला के वह विशेषज्ञ हैं - भय की सीमा का निर्धारण भी उनकी सुविचारित नीति का अंश होता है । भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री के पद , अधिकार, सत्ता व पार्टी में उनकी मजबूती से भलीभांति परिचित मुख्यमंत्री मोदी ने अत्यन्त विनम्र शब्दों में कह दिया था कि गोधरा काण्ड में उन्होंने राजधर्म ही निभाया है । प्रधानमंत्री मोदीजी ने पाकिस्तान में सर्जिकल स्ट्राइक कर भारतीय सैन्य बल की क्षमता का विश्वास न केवल पाकिस्तान को बल्कि सभी कुरानी ताकतों को दिखाई ही दिया था बल्कि विश्व शक्तियों में यह धाक भी जमा दी कि राष्ट्र सुरक्षा के लिये वह कहीं तक भी जा सकते हैं । आज उन्हें विश्व नेताओ में मान्य किया जा रहा है ।

काश्मीर समस्या निराकरण के लिये अनेक उपाय किए हैं, कर रहें हैं । काश्मीर में, शासन में गठजोड़ सरकार में शामिल होना बहुत बड़ी बात है । निरंकुश मुस्लिम सत्ता पर सीधा अंकुश । आतंकियों के भय से बन्द पड़े शिक्षा संस्थानों में पुनर्अध्यापन की व्यवस्था । बोर्ड परीक्षाओं का संचालन । मोदीजी ने ही कहा था कि बच्चों के एक हाथ में कुरान और दूसरे में कम्प्यूटर होना चाहिए । नोटबन्दी से पाकिस्तानी अर्थ व्यवस्था पर, आंतकवादी शक्तियों को अकूत धन, नकली नोट छापना सब ओर से शिकंजा कसा जा रहा है। अब मोदीजी ने नारा दिया- गाली से नहीं गोली से नहीं अब कश्मीरियों को गले लगा कर , भारतीय समाज की मुख्य धारा में जोड़ना है । तीन तलाक का मामला सुप्रीम कोर्ट में तलाक विरोधी के रूप में केन्द्र शासन ने लड़ा । उसके निर्देश पर संसद के शीतकालीन अधिवेशन में बिल लाया जा रहा है । मुल्ला-मौलवियों की दुकाने बन्द । भारत विरोधी आवाज में भी बेहद कमी आई है ।

मोदीजी का यशोगान करना मेरा उदश्य नहीं है । मुझे तो उस नर-नाहर से परिचित कराना है जो केवल भारत में ही नही , सम्पूर्ण विश्व की उन शक्तियो को भी बल प्रदान करना है जो विश्व - शांति स्थापना के कार्य में जुटी हुई हैं । भारत का कोई सामाजिक उद्देश्य नहीं है । लेकिन कुत्त के काटने के बाद , पोड़ा दायक इन्जक्शेन लगवाने के स्थान पर, कुत्ते को कांजी हाउस में बन्द करवाना , पागल कुत्ते को मरवाना ज्यादा उपयुक्त समझते हैं । किया भी वही जा रहा है । सनाध्यक्षां को सीधे रक्षामंत्री व प्रधानमंत्री से आवश्यकतानुसार मिलने की पूर्ण सुविधा है । निर्देश भी स्पष्ट मिलते हैं । सेनाएं पूरी कर्तव्य निष्ठा से उनका पालन कर रही हैं । नक्सलवाद पर भी अंकुश लगा है ।

हमें तो उमर अब्दुल्ला के कथन को कार्यान्वित करना है, कराना है । मोदीजी को २०२५ तक पराजित नहीं किया जा सकता ।

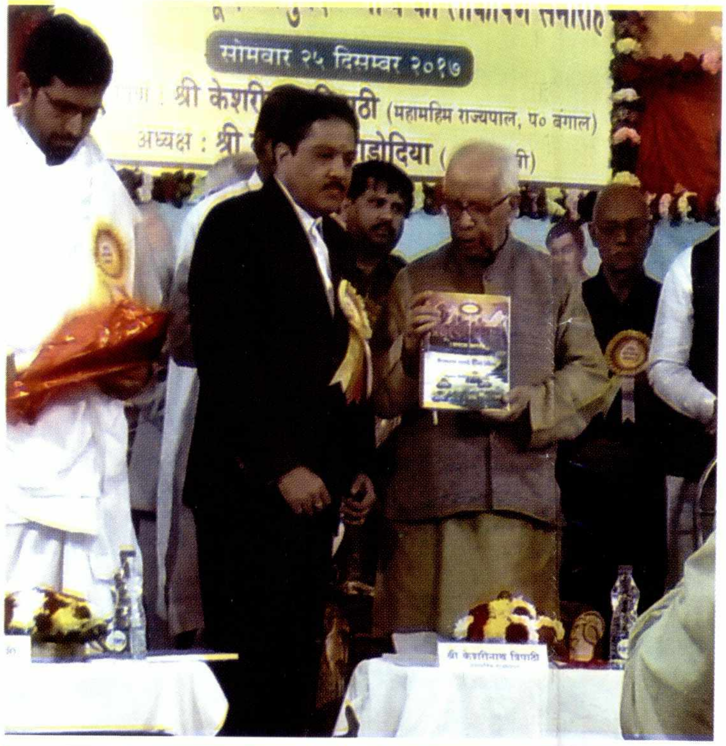

आर्य समाज कलकत्ता के १३२ वें वार्षिक उत्सव के अवसर पर बंग-भाषा में अनूदित यजुर्वेद भाष्य का लोकापर्ण करते हुए पं० बं० के महामहिम राज्यपाल श्री केशरी नाथ जी त्रिपाठी और प्रधान श्री सुरेश चन्द जायसवाल, मन्त्री श्री दीपक आर्य एवं कार्यक्रम के अध्यक्ष आचार्य श्री सोमदेव जी शास्त्री।

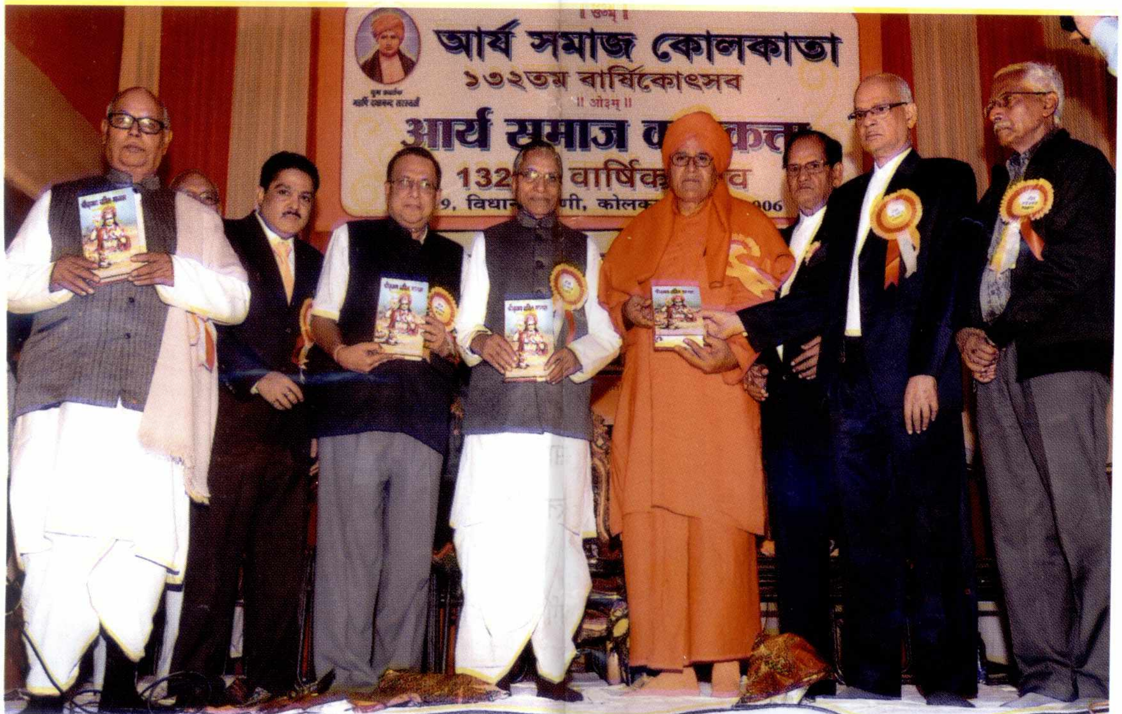

प० देवनारायणजी तिवारी द्वारा रचित श्री कृष्ण चरित मानस का विमोचन मेघालय के राज्यपाल श्री गंगा प्रसाद जी द्वारा

आर्य समाज कलकत्ता के १३२ वें वार्षिकोत्सव पर महामहिम राज्यपाल मेघालय का अभिनन्दन समारोह

आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल का त्रैवार्षिक अधिवेशन एवं आगामी तीन वर्षों के लिए अधिकारियों एवं अन्तरंग सदस्यों का चयन ।

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता - ६ के लिए श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल द्वारा प्रकाशित तथा एशोशियेटेड आर्ट प्रिण्टर्स, ७/२, विडन रो, कोलकाता-६ में मुद्रित ।